www.shodhpith.com ISSN (Online): 3049-3331

Shodhpith
International Multidisciplinary
Research Journal
(International Open Access, Peer-reviewed & Refereed Journal)
(Multidisciplinary, Bimonthly, Multilanguage)

Volume: 1 Issue: 4 July-August 2025

बिहार में सत्रहवीं विधानसभा चुनाव में पिछड़ी जातियों में रा. जनीतिक चेतना के विकास का समाजिक–राजनीतिक अनुशीलन

डॉ0 महेश कुमार पिन्टू

पी–एच0 डी0, विश्वविद्यालय राजनीति विज्ञान विभाग, बी.एन.एम.यू., मधेपुरा

सार–संक्षेप:

भारतीय राजनीति में जातिवाद का दखल कोई नई बात नहीं है और प्रायः सभी दल पूरी प्रतिबद्धता के साथ अपने–अपने वोट बैंक को बढ़ाने के लिए इस सशक्त हथियार का इस्तेमाल करते रहे हैं। लेकिन प्रत्यक्ष तौर पर कोई भी दल ये स्वीकार करने की हिम्मत नहीं कर रहा है कि उसने ऐसा अपना वोट बैंक बढ़ाने की खातिर किया है, बल्कि सभी का ये कहना है कि उन्होंने केवल समाज के सभी समुदायों वर्गों के उचित प्रतिनिधित्व का ख्याल रखा है, ताकि समाज का कोई भी वर्ग उपेक्षित न रहे। भारतीय सामाजिक संगठन की सबसे बड़ी विशेषता शायद जाति व्यवस्था ही है। भारतीय जनसाधारण के लिए जाति कितना महत्त्व है यह इस बात से भी पता चलता है कि साधारण भारतीय किसी दूसरे भारतीय का परिचय प्राप्त करते समय उसकी जाति जानना सबसे अधिक आवश्यक समझता है। भारतीय राजनीति में जातीय राजनीति उतनी ही पुरानी है, जितनी कि हमारी आजादी। यह अलग बात है कि उस समय समाज के सभी वर्गों में समानता के लिए दलित और पिछड़ों को राजनीति में भागीदारी देने की बात हुई। बताते चलें कि आजादी मिलते ही जब 1952 में अंतरिम सरकार के लिए चुनाव की बात हुई तो कांग्रेस पार्टी ने सभी वर्गों के प्रतिनिधित्व के नाम पर दलित, पिछड़ी और अत्यंत पिछड़ी जातियों को टिकट दिया। इसी क्रम में दरोगा राय, प्रभावती गुप्ता और जगदेव प्रसाद जैसे पिछड़े वर्ग के नेता भारतीय राजनीति का हिस्सा बने। उसके बाद साठ के दशक में जेपी के नेतृत्व में समाजवादियों ने अगड़ा–पिछड़ा के नाम पर ही चुनाव लड़ा और संपूर्ण क्रांति का नारा दिया। दूसरी तरफ उसी समय समाज का एक वर्ग हाशिए पर था, इसलिए सोशलिस्ट पार्टी ने नारा दिया– संसोपा ने बांधी गांठ, पिछड़े पावें सौ में साठ।

परिचय

किसी भी लोकतंत्र का सबसे महत्वपूर्ण अंग नागरिक होता है क्योंकि नागरिकों पर ही संसद और विधानसभा में अपने प्रतिनिधियों को चुनकर भेजने की जिम्मेवारी होती है। प्रत्येक नागरिकों का दायित्व है कि वे चुनाव में अपने मताधिकार का प्रयोग निष्पक्ष एवं निर्भीक होकर करें, लेकिन व्यवहार में ऐसा देखने को नहीं मिलता है। चुनाव के समय सभी पार्टी के नेता, सर्वप्रथम अपने जाति के लोगों से सम्पर्क स्थापित करते हैं और अपनी जाति के लोगों को गोलबंद कर तथा अन्य जातियों के लोगों को भी एकजुट कर अपने दल के नेता अथवा अपने पक्ष में मतदान करने के लिए प्रेरित करते हैं। जिसके कारण राजनीति जाति से अधूरी नहीं रह जाती है और समय–समय पर राजनीति में जातिगत राजनीति की भूमिका अहम हो जाती है। राजनीति में जाति के आधार पर बढ़ते प्रतिनिधित्व का ही नतीजा था कि सन 1980 के चुनाव में कांग्रेस पार्टी ने नारा दिया–जात पर न पात पर, मुहर लगेगी हाथ

पर। इसके बाद तो राजनीति में जैसे जातिवाद को पंख ही लग गए। मंडल कमीशन के नाम से पिछड़े वर्गों को आरक्षण देने का बवंडर भारतीय राजनीति का न भूलने वाला कालखंड है। इस मंडल कमीशन के चलते ही 7 नवंबर, 1990 को वीपी सिंह की सरकार चली गई। तब तक बिहार में लालू प्रसाद यादव, रामविलास पासवान और नीतीश कुमार जैसे पिछड़ों के नेता अपना स्थान बना चुके थे। जाते–जाते वीपी सिंह बिहार में लालू प्रसाद यादव को मुख्यमंत्री बना गए। उसके बाद तो बिहार में जातिगत आधार पर ही चुनाव लड़ा जाने लगा। लालू यादव के समय एमवाई का समीकरण खूब चला।

जहाँ तक बिहार विधानसभा की बात है तो यह जातिगत समीकरण के लिए ही जानी जाती है। जब तक लालू यादव का शासन काल था, बिहार की राजनीति में यादवों का प्रतिनिधित्व सबसे अधिक था। नीतीश कुमार के आने के बाद एक लंबे अंतराल के बाद थोड़ा–बहुत परिवर्तन हुआ है। यादव और कुर्मी जाति की संख्या घटी है तो अन्य पिछड़ी जातियों के विधायकों की संख्या बढ़ी है। वहीं कोइरी जाति के विधायकों की संख्या भी बढ़ गई है। कायस्थ को छोड़कर अन्य सभी अगड़ी जातियों के विधायकों की संख्या बढ़ी है। वैसे परिवर्तन तो प्रकृति का नियम है, लेकिन बिहार में जब भी चुनाव होते हैं विधानसभा की सामाजिक बनावट में कुछ–न–कुछ परिवर्तन हो ही जाता है।

बिहार में प्रथम विधानसभा चुनाव वर्ष 1952 में सम्पन्न हुआ। श्रीकृष्ण सिंह, बिहार के पहले मुख्यमंत्री बने। उस समय बिहार में उच्च जातियों का बोलबाला था। बिहार की राजनीति की रणनीति उच्च जातियों के नेताओं के द्वारा निर्धारित की जाती थी। मुख्यमंत्री पद के लिए डॉ० श्रीकृष्ण सिंह और डॉ० अनुग्रह नारायण सिन्हा दो दावेदार थे। उस समय कायस्थ लॉबी डॉ० श्रीकृष्ण सिंह को साथ दिया और वे मुख्यमंत्री बन गये। पुनः वर्ष 1957 में द्वितीय विधानसभा चुनाव के बाद मुख्यमंत्री पद के लिए डॉ० अनुग्रह नारायण सिन्हा ने अपनी दावेदारी पेश की। वोटिंग के द्वारा मुख्यमंत्री पद के लिए चुनाव हुआ और श्रीकृष्ण सिंह दोबारा मुख्यमंत्री चुने गये। उस समय बिहार कांग्रेस में उच्च जातियों का ही बोलबाला था। पिछड़ी जातियों का सत्ता चयन में कोई खास भूमिका नहीं थी। श्रीकृष्ण सिंह भूमिहार जाति से आते थे। उनका मुकाबला उच्च जातियों से ही था।

वर्ष 1952 एवं वर्ष 1957 के बाद बिहार में नियमित रूप से विधानसभा चुनाव हो रहे हैं। जिसमें क्रमशः श्री दीप नाराण सिंह (राजपूत), पंडित विनोदानन्द झा (ब्राह्मण), श्री कृष्ण बल्लभ सहाय (कायस्थ), श्री महामाया प्रसाद सिन्हा (कायस्थ), श्री सतीश प्रसाद सिंह (कुशवाहा), श्री विन्देश्वरी प्रसाद मंडल (यादव), श्री भोला पासवान शास्त्री (अनुसूचित जाति), श्री सरदार हरिहर सिंह (राजपूत), श्री दरोगा प्रसाद राय (यादव), श्री कर्पूरी ठाकुर (हजाम), श्री केदार पाण्डेय (ब्राह्मण), मो० अब्दुल गफुर (मुस्लिम), श्री जग्गनाथ मिश्रा (ब्राह्मण), श्री राम सुन्दर दास (अनुसूचित जाति), श्री चन्द्रशेखर सिंह (राजपूत), श्री विन्देश्वरी दूबे (ब्राह्मण), श्री भागवत झा आजाद (ब्राह्मण), श्री सत्येन्द्र नारायण सिंह (राजपूत) बिहार के मुख्यमंत्री बने। वर्ष 1952 से वर्ष 1989 तक 14 बार उच्च जाति के, 05 बार पिछड़ी जाति के, 04 बार अनुसूचित जाति के तथा 01 बार मुस्लिम बिहार के मुख्यमंत्री बने। जिनमें कई दो से तीन बार भी मुख्यमंत्री के पद पर आसीन रहे हैं।

उपरोक्त आँकड़ों को देखने से स्पष्ट होता है कि इस काल में बिहार की राजनीति में उच्च जाति के नेताओं का वर्चस्व कायम रहा एवं उच्च जाति के लोगों की महत्वपूर्ण भूमिका रही। उच्च जाति के नेतागण ही बिहार की राजनीति की रणनीति एवं रूप–रेखा का निर्धारण करते थे। इस अवधि में पिछड़ी जातियों एवं दलित जातियों के नेता भी मुख्यमंत्री बने लेकिन न तो वे अपने जाति के लोगों को संगठित कर सके, न ही जातिगत वर्चस्व स्थापित कर सके और न ही बिहार स्तर पर अपना छवि को उभार सके। सिर्फ उच्च जातियों के नेताओं की कठपुतली बनकर ही रह गये। इसका मुख्य कारण था कि उस समय पिछड़ी एवं दलित जातियाँ सामाजिक–रा. जनीतिक–आर्थिक रूप से काफी पिछड़ी थी। पिछड़े वर्ग की प्रमुख जाति यादव, कोईरी एवं कुर्मी थी जो अपने जीवकोपार्जन के लिए मुख्यतः खेती पर आश्रित थी। जिसके कारण पिछड़ी जाति चाहकर भी उभर नहीं पायी। बिहार में पहली बार पिछड़ी जाति के श्री सतीश प्रसाद सिंह (कुशवाहा) बिहार के कार्यकारी मुख्यमंत्री बने। उसके बाद पिछड़ी जातियों में श्री विन्देश्वरी प्रसाद मंडल (यादव) वर्ष 1968 में, मुख्यमंत्री बने, जो लम्बे समय तक नहीं रह सके। उसके बाद श्री दरोगा प्रसाद राय (यादव) वर्ष 1970 में बिहार के मुख्यमंत्री बने। वे 16 फरवरी, 1970 से 22 दिसम्बर, 1970 तक मुख्यमंत्री रहे। उसके बाद श्री कर्पूरी ठाकुर (हजाम) बिहार के मुख्यमंत्री बने। वे 22 दिसम्बर, 1970 से 02 जून 1971 तथा 24 जून 1977 से 21 अप्रैल 1979 तक दो बार मुख्यमंत्री रहे। बिहार में

अनुसूचित जाति से सर्वप्रथम श्री भोला पासवान शास्त्री मुख्यमंत्री बने। वे तीन बार क्रमशः 23 मार्च 1968 से 29 जून 1968 तक, 22 जून 1969 से 04 जुलाई 1969 तक तथा 02 जून 1971 से 09 जनवरी 1972 तक मुख्यमंत्री / कार्यकारी मुख्यमंत्री रहे। उसके बाद श्री राम सुन्दर दास (अनुसूचित जाति) मुख्यमंत्री बने। वे 21 अप्रैल 1979 से 17 फरवरी 1980 तक मुख्यमंत्री रहे।

बिहार की राजनीति उठल–पुथल की राजनीति रही। श्रीकृष्ण सिंह के बाद 1989 ई0 तक कोई भी मुख्यमंत्री अपने पाँच वर्षों का कार्यकाल पूरा नहीं कर सके। उपरोक्त 38 वर्षों की बिहार की राजनीति में अगर हम पिछड़ी एवं दलित जातियों के मुख्यमंत्री के कार्यकाल का अवलोकन करते हैं तो हमें यह देखने को मिलता है कि किसी भी पिछड़ी एवं दलित जाति के नेता अपने पूर्ण कार्यकाल तक मुख्यमंत्री के पद पर आसीन नहीं रह सके। वही उच्च जाति के श्री कृष्ण सिंह, श्री दीप नारायण सिंह, पंडित विनोदानन्द झा, श्री कृष्ण बल्लभ सहाय, श्री महामाया प्रसाद सिंह, श्री सरदार हरिहर सिंह, श्री केदार पाण्डेय, श्री जग्गनाथ मिश्र, श्री चन्द्रशेखर सिंह, श्री विन्देश्वरी दूबे, श्री भागवत झा आजाद, श्री सत्येन्द्र नारायण सिंह में से कई ने अपने पूर्ण कार्यकाल / अर्धकाल तक अपने पद पर आसीन रहे। बिहार में वर्ष 1977 में जनता पार्टी की सरकार बनी। जनता पार्टी के विधायक दल के नेता श्री कर्पूरी ठाकुर चुने गये और वे बिहार के मुख्यमंत्री बने। श्री कर्पूरी ठाकुर हजाम जाति से आते हैं। जिसकी संख्या बिहार में काफी कम है। वे खासकर पिछड़ी जातियों के दर्द को भली–भाँति समझते थे। वर्ष 1977 में केन्द्र में जनता पार्टी की सरकार थी और श्री मोरारजी देसाई भारत के प्रधानमंत्री थे। केन्द्र में जनता पार्टी की सरकार होने के कारण इनका हौसला अन्दर ही अन्दर काफी मजबूत था। वर्ष 1978 में केन्द्र सरकार ने पिछड़ी जातियों के आरक्षण के लिए बिहार के ही श्री बी.पी. मंडल की अध्यक्षता में मंडल कमीशन की नियुक्ति की, जो 1980 में अपना रिर्पोट दिया परन्तु वर्ष 1980 में केन्द्र में सत्ता, कांग्रेस पार्टी के हाथ में आ गई। मंडल कमीशन के रिर्पोट को 1990 तक ठंडे बस्ते में डाल दिया गया। पुनः 1989 में जनता दल की सरकार के प्रधानमंत्री श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह के द्वारा मंडल कमीशन के रिर्पोट को लागू किया गया। श्री कर्पूरी ठाकुर ने पिछड़ी जातियों को आगे बढ़ाने के लिए अपने पार्टी के घोषणा पत्र के अनुसार पिछड़ी जातियों, अगड़ी जाति एवं स्त्रियों के लिए आरक्षण का प्रावधान किया। वे अत्यन्त पिछड़ी जातियों के लिए 12 प्रतिशत, पिछड़ी जातियों के लिए 8 प्रतिशत, अगड़ी जातियों के लिए 3 प्रतिशत तथा स्त्रियों के लिए 3 प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान किया। इस प्रकार 1990 से पूर्व श्री कर्पूरी ने पिछड़ी जातियों के विकास के लिए काफी काम किए। फिर भी पिछड़ी जाति मुख्य राजनीति में उभरकर सामने नहीं आ सकी। इस प्रकार कुल मिलाकर यह देखा जाय तो आजादी से लेकर वर्ष 1989 तक बिहार की राजनीति में उच्च जातियों का ही बोलबाला रहा।

वर्ष 1989 में केन्द्र में जनता दल की सरकार बनी और श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह भारत के प्रधानमंत्री बने। जनता दल की सरकार बनते ही मंडल कमीशन की आवाज जोरों से उठने लगी। देश में आरक्षण की राजनीति और सामाजिक न्याय के नारों के साथ पिछड़े समाज में क्रांतिकारी परिवर्तन आया। मंडल कमीशन लागू करने वाले तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह ने अपनी पुस्तक "मंजिल से ज्यादा सफर" में मंडल कमीशन लागू होने के बाद देश में हुए सामाजिक परिवर्तन को रेखांकित किया है। मंडल कमीशन लागू होने के बाद देश की राजनीति में बदलाव आया। इससे पंचायत से लेकर संसद तक की संरचना बदल गई। जो आजादी के बाद की सबसे बड़ी क्रांति है। इस क्रांति के फलस्वरूप बिहार में पिछड़े वर्ग के विभिन्न जातियों के लोगों में सामाजिक और राजनीतिक चेतना जागृत हुई और बिहार में पिछड़ों के नेता के रूप में श्री लालू प्रसाद यादव का उदय हुआ। बिहार में वर्ष 1990 में विधानसभा का चुनाव हुआ। श्री लालू प्रसाद यादव ने पिछड़ी जातियों को आपस में संगठित कर अपने पक्ष में मतदान करने के लिए लोगों को प्रेरित किया। बिहार की जनता भी कई वर्षो से कांग्रेस की सरकार के कार्यकलाप से नाराज थी और सत्ता परिवर्तन का विकल्प ढूढ़ रही थी। जिसके कारण पिछड़ी जातियों एवं अन्य जातियों के लोगों ने जनता दल के पक्ष में अपना मतदान किया और श्री लालू प्रसाद यादव बिहार के मुख्यमंत्री बने। 1990 के विधानसभा चुनाव में उच्च जाति के विधायकों की संख्या–105, पिछड़ी एवं अत्यन्त पिछड़ी जाति के विधायकों की संख्या–128, मुस्लिम–19, अनुसूचित जाति एवं जन जाति के विधायकों की संख्या–72 थी। जिसमें पिछड़ा वर्ग के यादवों की संख्या सबसे अधिक थी। बिहार में यादव जाति के लोग श्री लालू प्रसाद यादव को अपना जातिगत नेता मानते थे। श्री यादव ने 10 मार्च, 1990 से 28 मार्च, 1995 तक अपने पूर्ण कार्यकाल तक मुख्यमंत्री रहे। पुनः वर्ष 1995 में विधानसभा चुनाव हुआ और श्री लालू प्रसाद यादव दोबारा मुख्यमंत्री बने। उन्होंने

पिछड़ी जातियों के आरक्षण के अन्तर्गत यादव को प्रमुखता दी और कोईरी तथा कुर्मी की उपेक्षा की। जिसके कारण जनता दल में अन्दर ही अन्दर मतभेद शुरू हो गया। उस समय श्री नीतीश कुमार कुर्मी जाति के कद्दावर नेता थे। उन्होंने कोईरी और कुर्मी जाति को संगठित कर लव–कुश समीकरण बनाया और समता पार्टी का गठन किया। बाद में जनता दल को तोड़कर वर्ष 1997 में लालू यादव ने राष्ट्रीय जनता दल का गठन किया। समता पार्टी कालान्तर में जद (यू०) के रूप में परिवर्तित हो गयी और श्री नीतीश कुमार भारतीय जनता पार्टी से गठबंधन कर लालू यादव की सत्ता को चुनौती देने लगे। वर्ष 1995 के चुनाव में उच्च जाति के विधायकों की संख्या 66, पिछड़ी एवं अत्यन्त पिछड़ी जाति के विधायकों की संख्या–165, मुस्लिम–19 और अनुसूचित जाति एवं जन जाति के विधायकों की संख्या–72 थी। इस चुनाव में भी पिछड़ी जाति के यादवों की संख्या सबसे अधिक थी। पुनः वर्ष 2000 में विधानसभा का चुनाव हुआ। इस चुनाव में समता पार्टी और भारतीय जनता पार्टी सबसे बड़े गठबंधन के रूप में उभरी लेकिन पूर्ण बहुमत नहीं होने के कारण विश्वास मत हासिल करने में नाकाम रही। जिसके कारण श्री नीतीश कुमार मात्र 6 दिनों तक ही मुख्यमंत्री रह सके। उसके बाद दूसरी बड़ी पार्टी राजद, कांग्रेस और अन्य सहयोगी दलों का सहयोग लेकर सदन में विश्वास मत हासिल किया और सरकार बनाने में सफल रही। राजद ने विधायक दल के नेता के रूप में श्रीमति राबड़ी देवी को चुना गया और वह पुनः बिहार की मुख्यमंत्री बनी। श्रीमति राबड़ी देवी वर्ष 2000 से वर्ष 2005 तक अपना पूर्ण कार्यकाल पूरा की। इस चुनाव में निर्वाचित उच्च जाति के विधायकों की संख्या–56, पिछड़ी एवं अन्य पिछड़ी जाति के विधायकों की संख्या–128, मुस्लिम–19 और अनुसूचित जाति के विधायकों की संख्या–40 थी। पुनः वर्ष 2005 में विधानसभा का चुनाव हुआ। इस चुनाव में लोग श्री लालू प्रसाद यादव एवं श्रीमति राबड़ी देवी के कार्यकलापों से लोग काफी क्षुब्ध थे तथा यादवों के दहशत से भी भयभीत थे। बिहार की जनता सत्ता की बागडोर दूसरे नेता के हाथों में सौपने के लिए व्याकुल थी। इस चुनाव में बिहार की जनता पिछड़ी जाति के नेता श्री नीतीश कुमार को मुख्यमंत्री के रूप में देखना चाहती थी। उच्च जाति के लोग भी यादवों का दंश झेल चुके थे। जिसके कारण उच्च जाति के लोग भी जद (यू०) एवं उसके सहयोगी दलों के पक्ष में अपने मताधिकार का प्रयोग किया। परन्तु फरवरी 2005 के चुनाव में कोई भी दल पूर्ण बहुमत पाने में नाकाम रही। फलस्वरूप बिहार में राष्ट्रपति शासन लगाना पड़ा। पुनः नवम्बर 2005 के चुनाव में जद (यू०) और भाजपा गठबंधन आपार बहुमत के साथ सत्ता में आयी और श्री नीतीश कुमार बिहार के मुख्यमंत्री बने। पुनः वर्ष 2010, 2015 एवं 2020 में विधानसभा का चुनाव हुआ और पुनः बिहार के मुख्यमंत्री श्री नीतीश कुमार बने। 2020 के विधानसभा चुनाव में निर्वाचित उच्च जाति के विधायकों की संख्या–64, पिछड़ी एवं अन्य पिछड़ी जाति के विधायकों की संख्या–121, मुस्लिम–20 और अनुसूचित जाति के विधायकों की संख्या–39 है। श्री कुमार विगत 19 वर्षो से मुख्यमंत्री के पद पर आसीन हैं। इस प्रकार हमें देखने को मिल रहा है कि विगत 35 वर्षों से बिहार की राजनीति की बागडोर पिछड़ी जाति के नेताओं के हाथों में रही है अर्थात् पिछड़ी जाति का स्थायित्व कायम हो चुका है।

निष्कर्ष–

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि आजादी के समय अथवा 1952 के विधानसभा चुनाव से लेकर वर्ष 1989 तक बिहार की सत्ता की बागडोर उच्च जाति, पिछड़ी जाति, मुस्लिम तथा अनुसूचित जाति के नेताओं के हाथों में रही। वर्ष 1990 से वर्त्तमान तक अर्थात् 35 वर्षो से एकछत्र बिहार की बागडोर पिछड़ी जातियों के नेताओं के हाथों में है। राजनीति में किस वक्त क्या होगा, कुछ भी कहना संभव नहीं है लेकिन वर्त्तमान स्थितियों को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि आगामी चुनाव में भी बिहार की बागडोर किसी पिछड़ी जाति के नेताओं के हाथों में ही होगी। कई वर्षों तक राजनीतिक सत्ता से दूर रहने वाले पिछड़ी जातियों के नेताओं के लिए यह गर्व की बात है।

Author's Declaration:

The views and contents expressed in this research article are solely those of the author(s). The publisher, editors, and reviewers shall not be held responsible for any errors, ethical misconduct, copyright infringement, defamation, or any legal consequences arising from the content. All legal and moral responsibilities lie solely with the author(s).

संदर्भ स्रोत–

1. महतो, महेन्द्र कुमार, जाति एवं सामाजिक असमानता, महाराजा लक्ष्मीश्वर सिंह सोसाइटी, दरभंगा, 1996
2. सिन्हा, सच्चिदानन्द, लोकतंत्र की चुनौतियाँ, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005.
3. डॉ0 हरिनारायण ठाकुर, भारत में पिछड़ा वर्ग आन्दोलन और परिवर्तन का नया समाजशास्त्र, कल्पज पब्लिकेशन्स, प्रकाशन वर्ष 2009, दिल्ली.
4. डॉ० विष्णुदेव रजक, कर्पूरी ठाकुर का राजनीतिक दर्शन दलितों और पिछड़ों के मसीहा के रूप में, जानकी प्रकाशन, प्रथम संस्करण–2012, पटना एवं नई दिल्ली.
5. प्रसन्न कुमार चौधरी, स्वर्ग पर धावा बिहार में दलित आन्दोलन, वाणी प्रकाशन, द्वितीय संस्करण–2005, नई दिल्ली.

Cite this Article-

'डॉ0 महेश कुमार पिन्टू', **'बिहार में सत्रहवीं विधानसभा चुनाव में पिछड़ी जातियों में राजनीतिक चेतना के विकास का समाजिक-राजनीतिक अनुशीलन'**, Shodhpith International Multidisciplinary Research Journal, ISSN: 3049-3331 (Online), Volume:1, Issue:04, July-August 2025.

Journal URL- https://www.shodhpith.com/index.html

Published Date- 13 July 2025

DOI-10.64127/Shodhpith.2025v1i4007